

सामाजिक परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा की प्रासंगिकता

वीरेन्द्र कुमार शर्मा

शोध-सारांश

वर्तमान समय में प्रायः सभी मनुष्य सामाजिक परिवर्तन में शिक्षा की विशेष महत्ता की चर्चा करते हैं। सभी व्यक्तियों की यह धारणा है कि शिक्षा वह शक्तिशाली और स्थायी महत्व का कारक या अभियन्त्र है, जिससे समाज में सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन लाया जा सकता है, इसलिए वे शिक्षा प्रदान करने पर बहुत अधिक बल देते हैं। परिवर्तन संसार का निश्चित नियम है। संसार में सभी भौतिकपदार्थों एवं प्राकृतिक रचनाओं में परिवर्तन होता है। मानव-शरीर की अभिवृत्तियों, रचनाओं, क्षमताओं सभी में परिवर्तन होता है सार यह है कि परिवर्तन सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक है। शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। कभी सामाजिक परिवर्तन के कारण शिक्षा प्रभावित होती है, और कभी स्वयं शिक्षा ही सामाजिक परिवर्तन लाने का कारण बनती है। सामाजिक परिवर्तन के अन्य साधनों के प्रतिव्यक्ति कठोर हो सकता है। उसमें बदले की भावना जागृत हो सकती है। किन्तु शिक्षा व्यक्ति में विवेक एवं तर्क पैदा करती है, आत्मनियन्त्रण उत्पन्न करती है, जिस से वह स्वयं ही उचित-अनुचित को ध्यान में रखकर सामाजिक परिवर्तन को स्वीकार कर लेता है। वर्तमान युग की आवश्यकताओं का अनुभूत करते हुए, मैं ने सामाजिक परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा की प्रासंगिकता को अपने शोधालेख का विषय बनाते हुए शिक्षा को समसामयिक दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

मुख्यशब्द: समाज, सामाजिक परिवर्तन, शिक्षा, अभिवृत्तियाँ, आत्मनियन्त्रण, सापेक्ष, निर्विवाद, शाश्वत, प्रौद्योगिक, सृजनात्मकता, अनुसंधान, हस्तांतरण।

भूमिका

“परिवर्तन” एक तटस्थ शब्द है। इसका अर्थ न अच्छे परिवर्तन से है, और न बुरे परिवर्तन से। इसका अर्थ सिर्फ स्वरूप संरचना आदि में आने वाली भिन्नता से है। संक्षेप में कह सकते हैं कि परिवर्तन पूर्व अवस्था या अस्तित्व के प्रकार में अन्तर को कहते हैं।

विल्वर्टभूरे के अनुसार-परिवर्तन की प्रकृति को इस प्रकार स्पष्ट किया है-

- प्रत्येक समाज, संस्कृति में परिवर्तन नियमित रूप और बारम्बार होते रहते हैं।
- देश, काल की दृष्टि से परिवर्तन सापेक्ष है।
- परिवर्तन की प्रकृति संचयी है।¹

सामाजिक परिवर्तन-इस सम्प्रत्य का प्रयोग 1922 में डब्ल्यू एफ आगबर्न की पुस्तक “सोशल चेंज” से शुरू होता है। सामाजिक परिवर्तन दो शब्दों से मिलकर बना है-समाज और परिवर्तन। समाज का अर्थ केवल व्यक्तियों का समूह नहीं है, बल्कि समूह में रहने वाले के आपस में जो सम्बन्ध हैं, उन सम्बन्धों के संगठित रूप को समाज कहते हैं। समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। परिवर्तन का अर्थ है-बदलाव अर्थात् पहले की स्थिति और आज की स्थिति में आने वाला अन्तर या बदलाव ही परिवर्तन है। इस प्रकार समाज की पहले की स्थिति और आज की स्थिति में परिवर्तन आना ही सामाजिक परिवर्तन है। सामाजिक संगठन, सामाजिक ढांचे, सामाजिक सम्बन्धों या समाज के रहन-सहन के ढंग, रीति-रिवाजों, मूल्यों और विश्वास आदि में जो अन्तर आ जाता है, वह सामाजिक परिवर्तन कहलाता है। इस प्रकार सामाजिक परिवर्तन एक अवश्यंभावी तथ्य है। सामाजिक परिवर्तन से तात्पर्य समाज में घटित होने वाले परिवर्तन से है।

मैकाइवर और पेज का कहना है कि-समाजशास्त्री होने के नाते हमारी रुचि सामाजिक सम्बन्धों से है केवल इन सामाजिक सम्बन्धों में होने वाले परिवर्तन को ही सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। इनके अनुसार सामाजिक परिवर्तन सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। अतः सामाजिक परिवर्तन सामाजिक सम्बन्धों में होने वाले परिवर्तन का नाम है।²

किंगसले डेविस के अनुसार- “सामाजिक परिवर्तन से हम केवल उन्हीं परिवर्तनों को समझते हैं, जो सामाजिक संगठन अर्थात् समाज के ढाँचे और प्रकार्यों में घटित हैं।”³

मेरिल तथा एल्ट्रोन के शब्दों में- “सामाजिक परिवर्तन का अर्थ है कि, बहुत बड़ी संख्या में व्यक्ति ऐसे कार्य कर रहे हैं, जो कुछ दिनों पूर्व अथवा उनके पूर्वजों के कार्य से भिन्न है अर्थात् जब मानव व्यवहार संशोधित हो रहा है, तो वह सामाजिक परिवर्तन का संकेत है।”⁴

मूर के अनुसार- “सामाजिक ढाँचे में आये सभी महत्वपूर्ण बदलाव सामाजिक परिवर्तन होते हैं, जिनमें व्यापार के मूल्य या प्रतिमान, सांस्कृतिक उत्पादन और संकेत भी शामिल होते हैं।”⁵

गिलिन तथा गिलिन के शब्दों में- “सामाजिक परिवर्तन जीवन की मानी हुई रीतियों में होने वाले परिवर्तन को कहते हैं। चाहे वे परिवर्तन भौगोलिक दशाओं के परिवर्तन से हुए हों या सांस्कृतिक साधनों से या जनसंख्या की रचना या सिद्धान्तों के परिवर्तन से या समूह के अन्दर ही आविष्कारों के फलस्वरूप हुये हैं।”⁶

हेरीजोन्सन- ने सामाजिक परिवर्तन का अर्थ इस प्रकार स्पष्ट किया है-“सामाजिक परिवर्तन का अर्थ है- सामाजिक मूल्यों, संस्थाओं, अधिकारों की वस्तुओं, पुरस्कारों, कार्यकर्ताओं की कुशलता और दृष्टिकोणों में परिवर्तन आना।”⁷

अतः उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। संसार की प्रत्येक वस्तु में परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन जड़ और चेतन सभी में दृष्टिगोचर होता है। प्रकृति में यह परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। जब जड़ प्रकृति में परिवर्तन होता है तो, मनुष्य तो चेतन है। उसके द्वारा निर्मित समाज में, उसकी अवस्था में, उसके क्रिया-कलापों में भला परिवर्तन कैसे नहीं होगा? मनुष्य का जीवन एक स्तर से दूसरे स्तर तक परिवर्तित होता रहता है। मनुष्य की भाषा, विचार आवश्यकताएँ, जीवन के उद्देश्य, मूल्य, संस्कृति और सभी किसी न किसी रूप में बदलती रहती है। कहा जाता है कि समय, परिस्थितियाँ एवं संसार स्थिर नहीं रहते। परिवर्तन जीवन का शाश्वत नियम है, वे जो केवल अपने अतीत एवं वर्तमान को देखते रहते हैं, वे अपने भविष्य को खो देते हैं।

समाज, मानव-जीवन के प्रारंभ से ही मनुष्य के साथ है और तब से लेकर आजतक समाज या सामाजिक जीवन में उसके स्वरूप, संरचना, व्यवस्था, संगठन, आदर्श मूल्य सभी में परिवर्तन की निरन्तर और अवश्यम्भावी प्रक्रिया से कभी भी अवरोध नहीं आया। किसी भी

ऐसे समाज की कल्पना नहीं की जा सकती, जो पूर्णतः स्थिर हो। परिवर्तन तो प्रत्येक समाज में होगा ही। अपरिवर्तनशील समाज का अस्तित्व हो ही नहीं सकता। इस परिवर्तन का ही परिणाम है कि पाषाण युग का वह आदिमानव आज अन्तरिक्ष तक पहुँच गया है और भविष्य में पता नहीं कहाँ पहुँचेगा। अस्तु समाज के सन्दर्भ में होने वाले परिवर्तन को ही हम सामाजिक परिवर्तन कहते हैं।

सामाजिक परिवर्तन के प्रकार-

1. सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन।
2. सस्थानों से सम्बन्धित परिवर्तन।
3. सम्पत्ति और पुरस्कारों में परिवर्तन।
4. व्यक्तियों या कार्यकर्ताओं में परिवर्तन।
5. व्यक्तियों की क्षमताओं और उनके दृष्टिकोणों में परिवर्तन।

सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएँ

1. यह परिवर्तन पूरे सामाजिक ढाँचे में भी हो सकता है, तथा उसके किसी एक संगठन में भी हो सकता है।
2. जब हमारी भौतिक अथवा अभौतिक संस्कृति बदलती है तो सामाजिक परिवर्तन होता है।
3. शिक्षा आदि के द्वारा जब व्यक्ति के विचार-जगत् में क्रान्ति होती है, तब उसके व्यवहार में भी सामाजिक परिवर्तन आ जाता है।
4. जब सामाजिक परिवर्तन की गति मन्द हो जाती है तो क्रान्तियों की सम्भावना बढ़ जाती है और इस क्रान्ति के द्वारा एकाएक व्यापक परिवर्तन होते हैं।
5. यह आवश्यक नहीं कि सभी सामाजिक परिवर्तन स्थायी हो। आज जो परिवर्तन दिखाई दे रहा है, भविष्य में उनके स्वरूप में भी परिवर्तन हो सकता है।

सामाजिक परिवर्तनों पर शिक्षा का प्रभाव

जिस तरह सामाजिक परिवर्तनों का शिक्षा पर प्रभाव पड़ता है, वैसे ही सामाजिक परिवर्तन भी शिक्षा से प्रभावित होते हैं। कोठारी आयोग का कथन है, कि- “शिक्षा से यह आशा की जाती है कि वह लोगों के दृष्टिकोणों और मूल्यों में परिवर्तन लाए और उनमें आगे बढ़ने की भावना

पैदा करें।⁸ इससे निष्कर्ष निकलता है कि सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने के लिये शैक्षिक कार्य सहायक होते हैं। यह निर्विवाद सत्य है क्योंकि सामाजिक परिवर्तन के अनेक कारण हैं, जैसे-भौगोलिक कारक, प्राणीशास्त्रीय कारक, जनसंख्यात्मक कारक, प्रौद्योगिक कारक, सांस्कृतिक कारक आदि। शिक्षा भी एक कारक है, किन्तु शिक्षा की सृजनात्मकता शक्ति अपेक्षित ढंग से समाज को एक नया रूप प्रदान करती है। उनका मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन का घनिष्ठ सम्बन्ध है और इस घनिष्ठ सम्बन्ध के होने के कारण ही कभी सामाजिक परिवर्तन के कारण शिक्षा प्रभावित होती है, और कभी स्वयं शिक्षा ही सामाजिक परिवर्तन लाने का कारण बनती है। सामाजिक परिवर्तन के अन्य साधनों के प्रति व्यक्ति कठोर हो सकता है, उसमें बदले की भावना जागृत हो सकती है, किन्तु शिक्षा व्यक्ति में विवेक एवं तर्क पैदा करती है, आत्मनियंत्रण उत्पन्न करती है, जिससे वह स्वयं ही उचित-अनुचित को ध्यान में रखकर सामाजिक परिवर्तन को स्वीकार कर लेता है।

सामाजिक परिवर्तन के क्षेत्र में शिक्षा की प्रासंगिकता निम्नलिखित महत्वपूर्ण बिन्दुओं के आधार पर स्पष्ट की जा सकती है-

1. शाश्वत आदर्शों एवं मूल्यों को स्थायी करना-प्रत्येक समाज में कुछ शाश्वत मूल्य एवं आदर्श होते हैं। इन्हीं के आधार पर समाज स्थायित्व प्राप्त करता है। कभी सामाजिक परिवर्तन के कारण इन आदर्शों और मूल्यों में दुर्बलता आने लगती है और समाज पतन की ओर अग्रसित होने लगता है। ऐसे संक्रमण काल में शिक्षा, इन आदर्शों एवं मूल्यों की रक्षा का कार्य करती है।
2. बौद्धिक विकास करना-शिक्षा का प्रमुख कार्य मानव-ज्ञान एवं बुद्धि को विकसित करना है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति नवीन अनुसंधान एवं आविष्कार करता है, जिससे संस्कृति की भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों तत्वों में परिवर्तन होता रहता है। शिक्षा व्यक्ति में तर्क, विवेक और ज्ञान का विकास करती है। मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियों को विकसित करती है, उसे चिंतनशील बनाती है। बुद्धिमान और ज्ञानवान व्यक्ति उचित-अनुचित, अच्छा-बुरा आदि बातों पर विचार कर, विवेक संगत निर्णय लेता है। इस प्रकार शिक्षा, व्यक्ति का बौद्धिक विकास करती है। बौद्धिक विकास से समाज में नवीन अनुसंधान एवं आविष्कार होते हैं, जिससे सामाजिक परिवर्तन होता है।

3. संस्कृति का हस्तान्तरण-शिक्षा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को अर्थात् वर्तमान पीढ़ी से भावी पीढ़ी को सांस्कृतिक हस्तान्तरण का कार्य करती है, जिससे समाज में स्थायित्व एवं निरन्तरता आती है। पूर्वजों द्वारा अर्जित ज्ञान, अनुभव आदि को सांस्कृतिक परम्परा के रूप में संजोया जाता है। आदर्श, मूल्य, लोकाचार, रीति-रिवाज आदि की सांस्कृतिक विरासत को शिक्षा द्वारा ही भावी पीढ़ी को हस्तान्तरित किया जाता है। भावी पीढ़ी इस विरासत का विकास करती है, समृद्धशाली बनाती है। साथ ही भावी पीढ़ी, शिक्षा द्वारा समाज में जो भौतिक और सांस्कृतिक परिवर्तन आते हैं, उन्हें सम्मिलित कर अपनी आने वाली पीढ़ी को हस्तान्तरित करती है। शिक्षा व्यक्ति को समाज के आदर्शात्मक परम्परा से परिचित कराती है, जिसके अनुरूप मानव आचरण करना सीखता है। सांस्कृतिक हस्तान्तरण द्वारा ही समाज का मूल्यांकन होता है।
4. नवीन परिवर्तनों को दिशा-निर्देश देना-शिक्षा द्वारा ही सामाजिक कुरीतियों और बुराइयों को दूर करने का विचार होता है। व्यक्ति देश-विदेश के साहित्य का अध्ययन करता है। अपने समाज से तुलना करता है। तथा अच्छाइयों और बुराइयों पर चिंतन एवं मनन करता है। फलतः नवीन विचार जन्म लेते हैं। भारत में शिक्षा द्वारा ही बाल-विवाह निषेध, पुनर्विवाह प्रचलन, वृद्ध-विवाह निषेध, दहेज-प्रथा निषेध आदि आन्दोलनों को बल प्राप्त हुआ है। शिक्षित नारियों द्वारा ही समानाधिकार की आवाज उठायी गई है। अतः शिक्षा ही सामाजिक परिवर्तन लाने हेतु दिशा-निर्देश देती है।
5. परिवर्तनों की समीक्षा करना-परिवर्तन एक निरन्तर गतिशील प्रक्रिया है। विश्व में प्रतिक्षण परिवर्तन होते हैं। ठीक उसी प्रकार सामाजिक परिवर्तन किसी न किसी क्षेत्र में व रूप में गतिमान रहते हैं। इन परिवर्तनों की शिक्षित वर्ग समीक्षा करता है, मूल्यांकन करता है कि ये परिवर्तन वांछनीय हैं अथवा अवांछनीय हैं। वांछित परिवर्तनों को स्वीकार करने हेतु आवाज उठायी जाती है, समर्थन दिया जाता है तथा अवांछित परिवर्तनों का विरोध होता है। दूसरे शब्दों में शिक्षा ऐसे मूल्यों को निश्चित करती है, जिनके आधार पर परिवर्तनों की समीक्षा की जाती है और वांछित परिवर्तनों को प्रोत्साहित किया जाता है।
6. परिवर्तन में आयी बाधा को दूर करना-सामाजिक परिवर्तन लाने में अनेक बाधाएँ आती हैं। शिक्षा इन बाधाओं को दूर करने का कार्य करती है। शिक्षा के माध्यम से जनसाधारण को परिवर्तन लाने का कारण बतलाया जाता है। उदाहरणार्थ-प्राचीन भारत में वर्णव्यवस्था थी।

सम्पूर्ण समाज चार वर्णों में विभक्त था- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। स्वतंत्रता मिलने से भारत एक लोकतंत्रात्मक गणराज्य घोषित किया गया। प्रत्येक व्यक्ति को समानाधिकार प्राप्त हुए। अस्पृश्यता अपराध घोषित हुआ। शिक्षा के माध्यम से जनसाधारण को प्राचीन भारतीय संस्कृति के उदाहरणों द्वारा समझाया गया कि जन्म से न कोई शूद्र है और न कोई ब्राह्मण। कर्म सर्वोपरि है। फलतः शिक्षा सामाजिक परिवर्तन के क्षेत्र में आई बाधाओं को दूर करने का कार्य करती है।

7. आर्थिक संरक्षण प्रदान करना-शिक्षा व्यक्ति को आर्थिक संरक्षण प्रदान करती है। व्यक्ति अपनी रुचि, अभिरुचि, योग्यता साधन आदि के आधार पर व्यवस्था का चयन करता है। वर्तमान युग विज्ञान का युग है। समस्त व्यवसाय यंत्रीकृत हो गये हैं। शिक्षित व्यक्ति उनमें सफल हो सकता है। शिक्षा व्यक्ति को वर्तमान युग में व्यवसायिक प्रशिक्षण देती है और व्यक्ति अपनी क्षमतानुसार व्यावसायिक कार्य प्रारंभ करता है। कोई भी व्यक्ति किसी भी प्रकार का व्यवसाय कर सकता है। एक ओर शिक्षा रोजी-रोटी की चिन्ता से मुक्ति दिलाती है, वही दूसरी ओर शिक्षा से समाज प्रभावशाली होता है, जिसके सदस्य आटा-दाल की समस्याओं से मुक्त होते हैं तथा आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न समाज में ही समयानुकूल सामाजिक परिवर्तन लाने एवं ग्रहण करने की भावना बलवती होती है।
8. एकता एवं समग्रता उत्पन्न करना-जब समाज के विभिन्न वर्गों में आपसी मतभेद के कारण संघर्ष होने लगता है तो शिक्षा लोगों में ऐसे विचारों को प्रसारित करती है, जिनसे एकता तथा समग्रता उत्पन्न हो जाती है। वर्तमान में हमारे देश में जातीयता, प्रांतीयता, साम्प्रदायिकता, भाषा आदि के कारण आये दिन संघर्ष होते रहते हैं। शिक्षा सांस्कृतिक आधार पर महापुरुषों के विचारों का प्रसार एवं प्रचार कर, राष्ट्रीय एकता की स्थापना का कार्य करती है।
9. व्यक्ति को सामाजिक परिवर्तन के लिये तैयार करना-व्यक्ति के विचार सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए एक सशक्त माध्यम का कार्य करते हैं। इस कार्य में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उदाहरण के लिए- एकीकृत बाल-विकास कार्यक्रम के रूप में प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य, व्यक्ति के मानसिक, भौतिक, सामाजिक, भावात्मक, नैतिक और सौन्दर्यात्मक पक्षों का सम्पूर्ण विकास है। इस रूप में शिक्षा स्वस्थ मस्तिष्क तैयार करने का सर्वोत्तम कार्य करती है, जिससे बालक न केवल नए विचारों की सृष्टि कर सकें

अपितु उनका सृजन और अन्वेषण भी कर सकें। इस प्रकार शिक्षा सामाजिक परिवर्तन के लिए व्यक्ति को तैयार करती है।

10. सृजनात्मक विज्ञान के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करना-सृजनात्मक चिन्तन अतीत की सही व्याख्या कर सकता है, वर्तमान को समझ सकता है और भविष्य का पूर्वानुमान लगा सकता है। लोकतान्त्रिक व्याख्या उसका उपयुक्त उदाहरण है। लोकतान्त्रिक व्यवस्था में सर्जक व्यक्तियों के विकास के लिए सर्वोत्तम अवसर प्राप्त होते हैं।

क्योंकि इसमें विचारों को व्यक्त करने और आलोचना करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है साथ ही सामाजिक निर्णय होने में मतैक्य की आवश्यकता पर भी जोर दिया जाता है। इस रूप में शिक्षा द्वारा ऐसा व्यक्तित्व तैयार किया जाता है, जो समाज को गतिशीलता प्रदान करे। इस प्रकार समाज में परिवर्तन लाने में शिक्षा सर्वाधिक सशक्त अभिकरण है।

निष्कर्ष

यद्यपि शिक्षा की प्रासंगिकता सामाजिक परिवर्तन के लिए महत्वपूर्ण है किन्तु शिक्षा उसी स्थिति में सामाजिक परिवर्तन की संवाहिका हो सकती है, जब इसमें वह श्रेष्ठ उपलब्धियों को साथ लेकर चले। श्रेष्ठ योजनाकार, प्रशासक और योग्य शिक्षक अपेक्षाकृत श्रेष्ठतम चिन्तक होंगे। वे ही अपने छात्रों के लिए श्रेयस्कर सामाजिक परिवर्तन लाने में मार्गदर्शक बन सकेंगे। इसके लिए शिक्षा में भी परिवर्तन करने आवश्यक होंगे। शिक्षण-संस्थाओं का उच्चस्तर, शिक्षण की सृजनात्मक विधियाँ, मूल्यांकन की वस्तुनिष्ठ प्रणाली, उचित वातावरण ही सामाजिक परिवर्तन लाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। इस तथ्य को एम. एन. श्रीनिवासन ने इस रूप में व्यक्त किया है- “शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का प्रभावशाली संयंत्र तभी बन सकती है, जबकि वह स्वयं स्वस्थ एवं दोष-मुक्त हो।”⁹

सन्दर्भ

1. Moore, W.E., Social Change, p.16.
2. शर्मा, डॉ० सरोज, “उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा” पृष्ठ संख्या-57.
3. Davis Kingsley, Society, p-20.
4. सिंह, डॉ० विजेन्द्र, त्यागी, ओंकार सिंह, उदीयमान भारतीय समाज और शिक्षा, पृ. 225.

5. रूहेला, प्रो. एस. पी., विकासोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा, पृ. 175.
6. पचौरी, डॉ० गिरीश, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, पृ. 174.
7. रूहेला, प्रो. एस. पी., विकासोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा, पृ. 176.
8. शर्मा, डॉ० सरोज, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, पृ. 65.
9. शर्मा, डॉ० सरोज, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, पृ. 67.

सन्दर्भ ग्रंथ-सूची

1. Moore, W.E., Social Change, Prentice Hall, New Delhi, 1965.
2. शर्मा, डॉ० सरोज, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, श्याम प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2007.
3. Kingsley, Davis, Society, Macmillan, New York, 1959.
4. सिंह, डॉ० विजेन्द्र, त्यागी, ओंकार सिंह, उदीयमान भारतीय समाज और शिक्षा, अरिहन्त शिक्षा प्रकाशन, 2005.
5. रूहेला, प्रो. एस. पी., विकासोन्मुख भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, तृतीय संस्करण, 2007.
6. पचौरी, डॉ० गिरीश, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, इंटरनेशनल पब्लिक हाउस, प्रथम संस्करण, 2010.
7. शर्मा, डी.एल., शिक्षा तथा भारतीय समाज, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, 1995.